Chapter पैंसठ

बलराम का वृन्दावन जाना

इस अध्याय में बतलाया गया है कि किस तरह भगवान् बलराम गोकुल गये, वहाँ पर गोपियों के साथ रमण किया और यमुना नदी का कर्षण किया।

एक दिन बलराम अपने सम्बन्धियों तथा मित्रों को देखने गोकुल गये। जब वे वहाँ पहुँचे तो वृद्धा गोपियाँ तथा कृष्ण के माता-पिता नन्द-यशोदा जो दीर्घकाल से चिन्तित थे—सबों ने उनको गले लगाया और आशीर्वाद दिया। बलराम ने अपने पूज्यों का उनकी आयु, मैत्री तथा पारिवारिक सम्बन्ध के अनुसार अभिवादन किया। जब गोकुलवासी तथा बलराम एक-दूसरे की कुशल-क्षेम पूछ चुके तो

बलराम अपनी यात्रा के बाद विश्राम करने लगे।

थोड़े ही समय बाद तरुण गोपियाँ बलराम के पास आईं और उनसे कृष्ण की कुशलता के बारे में पूछा, ''क्या कृष्ण अपने माता-पिता तथा सखाओं को अब भी स्मरण करते हैं? क्या वे उन सबसे मिलने गोकुल आयेंगे? हमने कृष्ण के लिए अपना सर्वस्व, यहाँ तक कि अपने पिता, माता तथा अन्य संबंधियों को त्याग दिया किन्तु अब उन्होंने हम सबों को त्याग दिया है। उनके मधुर मन्द-हासयुक्त मुख को देखने के बाद हम काम-इच्छा से अभिभूत होकर उनके शब्दों पर विश्वास करने के अतिरिक्त कर ही क्या सकती थीं? इतने पर भी यदि कृष्ण हमसे विलग होकर अपने दिन काट सकते हैं, तो हम उनके वियोग को क्यों नहीं सहन कर सकतीं? अत: उनके विषय में बातें करते रहने का कोई कारण नहीं है।'' इस तरह से गोपियाँ कृष्ण की मनोहर बातों, मोहक चितवन, क्रीड़ामय संकेतों तथा प्रेमपूर्ण आलिंगन का स्मरण करने लगीं जिसके कारण वे सिसकने लगीं। बलराम ने कृष्ण द्वारा भेजा गया मोहक सन्देश सुनाकर उन्हें ढाढ़स बँधाया।

भगवान् बलराम यमुना के तट पर कुंजों में गोपियों के साथ विहार करते हुए गोकुल में दो मास रहे। इन लीलाओं को देखकर देवताओं ने स्वर्ग में दुन्दुभियाँ बजाईं और फूलों की वर्षा की तथा स्वर्ग के मुनियों ने भगवान् बलराम की महिमा का गान किया।

एक दिन बलराम वारुणी मदिरा पीकर मदोन्मत्त हो उठे और गोपियों के साथ जंगल में घूमने लगे। उन्होंने यमुना को पुकारा, ''तुम पास आ जाओ जिससे मैं गोपियों के साथ तुम्हारे जल में क्रीड़ा कर सकूँ।'' किन्तु यमुना ने इस आदेश की उपेक्षा की। अत: बलराम ने अपने हल की नोक से यमुना को खींचना प्रारम्भ कर दिया और उसे सैकड़ों धाराओं में विभक्त कर दिया। भय से काँपती यमुनादेवी प्रकट हुईं और बलराम के चरणों पर गिरकर क्षमा करने के लिए प्रार्थना की। उन्होंने यमुना को जाने दिया और तब युवती-मित्रों के साथ कुछ काल तक क्रीड़ा करने के लिए जल में प्रवेश किया। जब वे जल से बाहर आये तो कान्ति देवी ने उन्हें सुन्दर आभूषण, वस्त्र तथा हार प्रदान किये। आज भी यमुना नदी बलदेव के सामने घुटने टेकने के प्रतीक रूप में उनके हल द्वारा काटी गई अनेक धाराओं में बहती है।

जब भगवान् बलराम क्रीड़ा कर रहे थे तो उनका मन गोपियों की क्रीड़ाओं से मोहित हो गया।

इस तरह उन्होंने उनके साथ कई रातें बिताईं किन्तु उन्हें लगा उनके संग में मानो एक रात ही बिताई है।

श्रीशुक उवाच
बलभद्रः कुरुश्रेष्ठ भगवान्रथमास्थितः ।
सुहृद्दिदृक्षुरुत्कण्ठः प्रययौ नन्दगोकुलम् ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; बलभद्रः—बलराम; कुरु-श्रेष्ठ—हे कुरुओं में श्रेष्ठ (राजा परीक्षित); भगवान्—भगवान्; रथम्—अपने रथ में; आस्थितः—सवार; सुहृत्—शुभचिन्तक मित्रों को; दिदृक्षुः—देखने की इच्छा से; उत्कण्ठः—उत्सुक; प्रययौ—यात्रा की; नन्द-गोकुलम्—नन्द महाराज के गोकुल-ग्राम की।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : हे कुरुश्रेष्ठ, एक बार अपने शुभचिन्तक मित्रों को देखने के लिए उत्सुक भगवान् बलराम अपने रथ पर सवार हुए और उन्होंने नन्द गोकुल की यात्रा की।

तात्पर्य : जैसाकि श्रील जीव गोस्वामी ने इंगित किया है, *हरिवंश* (विष्णु पुराण ४६.१०) में भी बलराम के श्री वृन्दावन जाने का वर्णन मिलता है—

कस्यचिदथ कालस्य स्मृत्वा गोपेषु सौहृदम्।

जगामैको व्रजं रामः कृष्णस्यानुमते स्थितः॥

''ग्वालों के साथ प्रगाढ़ मैत्री का स्मरण करके एक बार भगवान् बलराम भगवान् कृष्ण से अनुमति लेकर अकेले ही व्रज गये।'' वृन्दावन के भोले-भाले वासी व्यथित थे कि भगवान् कृष्ण अन्यत्र जाकर रहने लगे हैं इसलिए भगवान् बलराम उन लोगों को सान्त्वना देने वहाँ गये थे।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने इस प्रश्न का उत्तर दिया है कि शुद्ध प्रेम के महासागर भगवान् कृष्ण भी व्रज क्यों नहीं गये। उसकी व्याख्या करने के लिए उन्होंने दो श्लोक उद्धृत किये हैं—

प्रेयसीः प्रेमविख्याताः पितरावतिवत्सलौ।

प्रेमवश्यश्च कृष्णस्तांस्त्यक्त्वा नः कथमेष्यति॥

इति मत्वैव यदवः प्रत्यबध्नन् हरेर्गतौ।

व्रजप्रेमप्रवर्धि स्वलीलाधीनत्वमीयुषः॥

''यदुओं ने सोचा, ''भगवान् की प्रेमिकाएँ अपने शुद्ध आह्लादमय प्रेम के लिए विख्यात हैं और उनके माता-पिता उनके प्रति अतीव वत्सल हैं। भगवान् कृष्ण शुद्ध प्रेम के वशीभूत हैं अतएव यदि वे उन्हें देखने जाते हैं, तो फिर वे किस तरह उन्हें छोड़कर हमारे पास वापस आ सकेंगे?'' इस विचार से

यदुओं ने भगवान् हरि को जाने से रोका। वे जानते थे कि वे उन लीलाओं के अधीन हो जाते हैं जिनमें वे व्रजवासियों के नित्यवर्धमान प्रेम का आदान-प्रदान करते हैं।''

परिष्वक्तश्चिरोत्कण्ठैर्गोपैर्गोपीभिरेव च ।
रामोऽभिवाद्य पितरावाशीर्भिरभिनन्दितः ॥ २ ॥

शब्दार्थ

परिष्वक्तः—आलिंगन किया हुआ; चिर—दीर्घकाल से; उत्कण्ठैः—चिन्तित; गोपैः—ग्वालों के द्वारा; गोपीभिः—गोपियों के द्वारा; एव—निस्सन्देह; च—भी; रामः—बलराम; अभिवाद्य—अभिवादन करके; पितरौ—अपने माता-पिता (नन्द तथा यशोदा) को; आशीर्भिः—प्रार्थनाओं से; अभिनन्दितः—हर्षपूर्वक सत्कार किया हुआ।

दीर्घकाल से वियोग की चिन्ता सह चुकने के कारण गोपों तथा उनकी पत्नियों ने बलराम का आलिंगन किया। तब बलराम ने अपने माता-पिता को प्रणाम किया और उन्होंने स्तुतियों द्वारा बलराम का हर्ष के साथ सत्कार किया।

तात्पर्य : इस स्थिति के सम्बन्ध में श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ने निम्नलिखित श्लोक दिया है—

नित्यानन्दस्वरूपोऽपि प्रेमतप्तो व्रजौकसाम्।
ययौ कृष्णमपि त्यक्त्वा यस्तं रामं मुहुः स्तुमः॥

''हम भगवान् बलराम का बारम्बार यशोगान करते हैं। यद्यपि वे नित्यानन्द हैं किन्तु व्रजवासियों के प्रति अपने प्रेम के कारण उन्हें वेदना का अनुभव हुआ अतः वे भगवान् कृष्ण को छोड़ कर भी उन्हें देखने गये।''

चिरं नः पाहि दाशार्ह सानुजो जगदीश्वरः ।
इत्यारोप्याङ्कमालिङ्ग्य नेत्रैः सिषिचतुर्जलैः ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

चिरम्—दीर्घकाल से; नः—हमारी; पाहि—रक्षा करें; दाशार्ह—हे दशार्ह वंशज; स—सहित; अनुजः—तुम्हारे छोटे भाई के; जगत्—ब्रह्माण्ड के; ईश्वरः—स्वामी; इति—ऐसा कह कर; आरोप्य—उठाकर; अङ्कम्—अपनी गोद में; आलिङ्ग्य—आलिंगन करके; नेत्रैः—आँखों के; सिषिचतुः—सिक्त कर दिया; जलैः—जल से।

[नन्द तथा यशोदा ने प्रार्थना की]: ''हे दशार्ह वंशज, हे ब्रह्माण्ड के स्वामी, तुम तथा तुम्हारे छोटे भाई कृष्ण सदैव हमारी रक्षा करते रहो।'' यह कह कर उन्होंने श्री बलराम को अपनी गोद में उठा लिया, उनका आलिंगन किया और अपने नेत्रों के आँसुओं से उन्हें सिक्त कर दिया।

तात्पर्य : इस श्लोक पर श्रील जीव गोस्वामी ने इस प्रकार टीका की है : ''नन्द तथा यशोदा ने श्री बलराम से प्रार्थना की, ''तुम अपने छोटे भाई सहित हमारी रक्षा करते रहो।'' इस तरह उन्होंने इस बात के लिए सम्मान व्यक्त किया कि वे बड़े भाई हैं और उन्होंने यह भी दिखलाया कि वे उन्हें अपने ही पुत्र के रूप में कितना मानते हैं।''

गोपवृद्धांश्च विधिवद्यविष्ठैरभिवन्दितः ।
यथावयो यथासख्यं यथासम्बन्धमात्मनः ॥ ४॥
समुपेत्याथ गोपालान्हास्यहस्तग्रहादिभिः ।
विश्रान्तम्सुखमासीनं पप्रच्छुः पर्युपागताः ॥ ५॥
पृष्टाश्चानामयं स्वेषु प्रेमगद्गदया गिरा ।
कृष्णे कमलपत्राक्षे सन्न्यस्ताखिलराधसः ॥ ६॥

शब्दार्थ

गोप—ग्वालों के; वृद्धान्—गुरुजन; च—तथा; विधि-वत्—वैदिक आदेशों के अनुसार; यविष्ठैः—छोटों के द्वारा; अभिवन्दितः—आदरपूर्वक सत्कार किया; यथा-वयः—आयु के अनुसार; यथा-सख्यम्—मैत्री के अनुसार; यथा-सम्बन्धम्—पारिवारिक सम्बन्ध के अनुसार; आत्मनः—अपने से; समुपेत्य—पास जाकर; अथ—तब; गोपालान्—ग्वालों को; हास्य—मुसकानों से; हस्त-ग्रह—उनके हाथ लेकर; आदिभिः—इत्यादि द्वारा; विश्रान्तम्—विश्राम किया; सुखम्—सुखपूर्वक; आसीनम्—बैठकर; पप्रच्छुः—पूछा; पर्युपागताः—चारों ओर एकत्र होकर; पृष्टाः—पूछा; च—तथा; अनामयम्—स्वास्थ्य के विषय में; स्वेषु—उनके मित्रों के बारे में; प्रेम—प्रेमवश; गद्गदया—रुक रुककर; गिरा—वाणी से; कृष्णे—कृष्ण के लिए; कमल—कमल की; पत्र—पंखड़ी (जैसी); अक्षे—आँखों वाले; सन्न्यस्त—समर्पित करके; अखिल—समस्त; राधसः—भौतिक सम्पत्ति।

तब बलराम ने अपने से बड़े ग्वालों के प्रति समुचित सम्मान प्रकट किया तथा जो छोटे थे उन्होंने उनका सादर-सत्कार किया। वे आयु, मैत्री की कोटि तथा पारिवारिक सम्बन्ध के अनुसार हरएक से हँसकर, हाथ मिलाकर स्वयं मिले। तत्पश्चात् विश्राम कर लेने के बाद उन्होंने सुखद आसन ग्रहण किया और सारे लोग उनके चारों ओर एकत्र हो गये। उनके प्रति प्रेम से रुद्ध वाणी से उन ग्वालों ने, जिन्होंने कमल-नेत्र कृष्ण को सर्वस्व अर्पित कर दिया था, अपने (द्वारका के) प्रियजनों के स्वास्थ्य के विषय में पूछा। बदले में बलराम ने ग्वालों की कुशल-मंगल के विषय में पूछा।

कच्चिन्नो बान्धवा राम सर्वे कुशलमासते ।
कच्चित्स्मरथ नो राम यूयं दारसुतान्विताः ॥ ७॥

शब्दार्थ

कच्चित्—क्या; नः—हमारे; बान्धवाः—सम्बन्धी; राम—हे बलराम; सर्वे—सभी; कुशलम्—ठीक से; आसते—हैं; कच्चित्—क्या; स्मरथ—स्मरण करते हैं; नः—हमको; राम—हे राम; यूयम्—तुम सभी; दार—पत्नियों; सुत—तथा पुत्रों; अन्विताः—सहित।

[ग्वालों ने कहा] : हे राम, हमारे सारे सम्बन्धी ठीक से तो हैं न? और हे राम क्या तुम सभी लोग अपनी पत्नियों तथा पुत्रों सहित अब भी हमें याद करते हो?

दिष्ट्या कंसो हतः पापो दिष्ट्या मुक्ताः सुहृज्जनाः ।
निहत्य निर्जित्य रिपून्दिष्ट्या दुर्गं समाश्रीताः ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

दिष्ट्या—भाग्य से; कंसः—कंस; हतः—मारा गया; पापः—पापी; दिष्ट्या—भाग्य से; मुक्ताः—मुक्त हुए; सुहृत्-जनाः—प्रिय सम्बन्धी; निहत्य—मार कर; निर्जित्य—जीत कर; रिपून्—शत्रुओं को; दिष्ट्या—भाग्यवश; दुर्गम्—दुर्ग या किले में; समाश्रीताः—शरण ले ली है।

यह हमारा परम सौभाग्य है कि पापी कंस मारा जा चुका है और हमारे प्रिय सम्बन्धी मुक्त हो चुके हैं। हमारा यह भी सौभाग्य है कि हमारे सम्बन्धियों ने अपने शत्रुओं को मार डाला है और पराजित कर दिया है तथा एक विशाल दुर्ग में पूर्ण सुरक्षा प्राप्त कर ली है।

गोप्यो हसन्त्यः पप्रच्छू रामसन्दर्शनादृताः ।
कच्चिदास्ते सुखं कृष्णः पुरस्त्रीजनवल्लभः ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

गोप्यः—तरुण गोपियों ने; हसन्त्यः—हँसती हुई; पप्रच्छुः—पूछा; राम—बलराम से; सन्दर्शन—साक्षात् दर्शन द्वारा; आदृताः—आदरित; कच्चित्—क्या; आस्ते—रह रहा है; सुखम्—सुखपूर्वक; कृष्णः—कृष्ण; पुर—नगर के; स्त्री-जन—स्त्रियों के; वल्लभः—प्राणप्रिय।

[शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा] : भगवान् बलराम के साक्षात् दर्शन से गौरवान्वित हुई गोपियों ने हँसते हुए उनसे पूछा, ''नगर की स्त्रियों के प्राणप्रिय कृष्ण सुखपूर्वक तो हैं?''

तात्पर्य : आचार्यों के अनुसार भगवान् कृष्ण की प्रिय संगिनियाँ उन्मत्त होकर हँस रही थीं क्योंकि वे अपने प्रेमी कृष्ण के वियोग में अतीव दुख का अनुभव कर रही थीं। भगवान् राम ने अपने छोटे भाई कृष्ण के प्रति उनके प्रेम का अतीव आदर किया। इस तरह *रामसन्दर्शनादृताः* शब्द का अर्थ हुआ कि बलराम ने गोपियों का आदर किया और पहले दिया गया अर्थ भी कि गोपियों ने बलराम का आदर किया।

कच्चित्स्मरति वा बन्धून्पितरं मातरं च सः ।

अप्यसौ मातरं द्रष्टुं सकृदप्यागमिष्यति ।
अपि वा स्मरतेऽस्माकमनुसेवां महाभुजः ॥ १० ॥

शब्दार्थ

कच्चित्—क्या; स्मरति—स्मरण करता है; वा—अथवा; बन्धून्—अपने परिवार के सदस्यों को; पितरम्—पिता को; मातरम्—अपनी माता को; च—तथा; सः—वह; अपि—भी; असौ—स्वयं; मातरम्—अपनी माता को; द्रष्टुम्—देखने के लिए; सकृत्—एक बार; अपि—भी; आगमिष्यति—आयेगा; अपि—निस्सन्देह; वा—अथवा; स्मरते—स्मरण करता है; अस्माकम्—हमारी; अनुसेवाम्—स्थिर सेवा; महा—बलशाली; भुजः—भुजाओं वाला।

''क्या वे अपने परिवार वालों को, विशेषतया अपने माता-पिता को याद करते हैं? क्या आपके विचार में वे अपनी माता को एक बार भी देखने वापस आयेंगे? और क्या बलशाली भुजाओं वाले कृष्ण हमारे द्वारा सदा की गई सेवा का स्मरण करते हैं?

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती की टीका है कि गोपियाँ फूलों की माला गूँथ कर, दक्षता के साथ सुगन्ध लेप करके तथा फूलों की पंखड़ियों से पंखे, शय्या तथा वितान बना कर कृष्ण की सेवा करती थीं। इन प्रेमपूर्ण सरल कार्यों से गोपियाँ भगवान् की सबसे बड़ी सेवा करती थीं।

मातरं पितरं भ्रातॄन्पतीन्पुत्रान्स्वसॄनपि ।
यदर्थे जहिम दाशार्ह दुस्त्यजान्स्वजनान्प्रभो ॥ ११ ॥
ता नः सद्यः परित्यज्य गतः सञ्छिन्नसौहृदः ।
कथं नु तादृशं स्त्रीभिर्न श्रद्धीयेत भाषितम् ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

मातरम्—माता को; पितरम्—पिता को; भ्रातॄन्—भाइयों को; पतीन्—पतियों को; पुत्रान्—पुत्रों को; स्वसॄन्—बहनों को; अपि—भी; यत्—जिनके; अर्थे—लिए; जहिम—हमने छोड़ दिया; दाशार्ह—हे दशार्हवंशी; दुस्त्यजान्—त्याग पाना कठिन; स्व-जनान्—अपने ही लोगों को; प्रभो—हे प्रभु; ताः—उन्हीं स्त्रियों को; नः—हम; सद्यः—सहसा; परित्यज्य—त्याग कर; गतः—चले गये; सञ्छिन्न—तोड़ कर; सौहृदः—मित्रता; कथम्—कैसे; नु—निस्सन्देह; तादृशम्—ऐसा; स्त्रीभिः—स्त्रियों द्वारा; न श्रद्धीयेत—विश्वास नहीं किया जायेगा; भाषीतम्—कहे गये शब्द।

''हे दाशार्ह, हमने कृष्ण की खातिर अपनी माताओं, पिताओं, भाइयों, पतियों, पुत्रों तथा बहनों का भी परित्याग कर दिया यद्यपि इन पारिवारिक सम्बन्धों का परित्याग कर पाना कठिन है। किन्तु हे प्रभु, अब उन्हीं कृष्ण ने सहसा हम सबों को त्याग कर हमारे साथ के समस्त स्नेह-बन्धनों को तोड़ दिया है और वे चले गये हैं। और ऐसे में कोई स्त्री उनके वादों पर कैसे विश्वास कर सकती है?

कथं नु गृह्णन्त्यनवस्थितात्मनो
वचः कृतघ्नस्य बुधाः पुरस्त्रियः ।

गृह्णन्ति वै चित्रकथस्य सुन्दर-
स्मितावलोकोच्छ्वसितस्मरातुराः ॥ १३॥

शब्दार्थ

कथम्—कैसे; नु—निस्सन्देह; गृह्णन्ति—स्वीकार करती हैं; अनवस्थित—अस्थिर; आत्मनः—हृदय वाले के; वचः—शब्द; कृत-घ्नस्य—कृतघ्न का; बुधाः—बुद्धिमान; पुर—नगर की; स्त्रियः—स्त्रियाँ; गृह्णन्ति—स्वीकार करती हैं; वै—निस्सन्देह; चित्र—आश्चर्यजनक; कथस्य—कथाओं के; सुन्दर—सुन्दर; स्मित—हँसती हुई; अवलोक—तिरछी नजरों से; उच्छ्वसित—पुनः जीवन प्रदान की गई; स्मर—काम-वासना द्वारा; आतुराः—विक्षुब्ध, चंचल।

''नगर की बुद्धिमान स्त्रियाँ ऐसे व्यक्ति के वचनों पर कैसे विश्वास कर सकती हैं जिसका हृदय इतना अस्थिर है और जो इतना कृतघ्न है? वे उन पर इसलिए विश्वास कर लेती थीं क्योंकि वे इतने अद्भुत ढंग से बोलते हैं और उनकी सुन्दर हँसी से युक्त चितवनें काम-वासना जगा देती हैं।

तात्पर्य : श्रीधर स्वामी के अनुसार इस श्लोक की प्रथम दो पंक्तियाँ कुछ गोपियों की उक्ति हैं और अन्य दो पंक्तियों में कुछ के उत्तर हैं।

किं नस्तत्कथया गोप्यः कथाः कथयतापराः ।
यात्यस्माभिर्विना कालो यदि तस्य तथैव नः ॥ १४॥

शब्दार्थ

किम्—क्या (लाभ); नः—हमारे लिए; तत्—उसके विषय में; कथया—विचार-विमर्श से; गोप्यः—हे गोपियो; कथाः—कथाएँ; कथयत—कृपा करके कहो; अपराः—अन्य; याति—बीतता है; अस्माभिः—हमारे; विना—बिना; कालः—समय; यदि—यदि; तस्य—उसका; तथा एव—उसी विधि से; नः—हमारा।

''हे गोपियो, उनके विषय में बातें करने में क्यों पड़ी हो? कृपा करके किसी अन्य विषय पर बात चलाओ। यदि वे हमारे बिना अपना समय बिता लेते हैं, तो हम भी उसी तरह से (उनके बिना) अपना समय बिता लेंगी।''

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी इंगित करते हैं कि यहाँ पर गोपियाँ सूक्ष्म रीति से संकेत करती हैं कि भगवान् कृष्ण उन सबों के बिना अपना समय सुखपूर्वक बिता लेते हैं जबकि वे सब अपने स्वामी के बिना सर्वाधिक दुखी हैं। भगवान् तथा उनमें यही अन्तर है। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ने इसकी टीका इस प्रकार की है : ''गोपियों ने अपने को अन्य स्त्रियों से पृथक् मानते हुए इस प्रकार सोचा, ''यदि अन्य स्त्रियाँ अपने प्रेमियों के साथ रहती हैं, तो वे जीवित रहती हैं और यदि उनसे विलग हो जाती हैं, तो मर जाती हैं। किन्तु हम न तो जीवित हैं न मरती हैं। विधाता ने हमारे मस्तकों पर यही भाग्य लिख रखा है। हम इसका कौन-सा उपचार ढूँढ़ सकती हैं?''

इति प्रहसितं शौरेर्जल्पितं चारुवीक्षितम् ।
गतिं प्रेमपरिष्वङ्गं स्मरन्त्यो रुरुदुः स्त्रियः ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार कह कर; प्रहसितम्—अट्टहास; शौरेः—भगवान् कृष्ण का; जल्पितम्—मोहक बातचीत; चारु—आकर्षक; वीक्षितम्—चितवनें; गतिम्—चाल; प्रेम—प्रेममय; परिष्वङ्गम्—आलिंगन; स्मरन्त्यः—स्मरण करती हुईं; रुरुदुः—चिल्ला उठीं; स्त्रियः—स्त्रियाँ।

ये शब्द कहती हुईं तरुण गोपियों को भगवान् शौरि की हँसी, अपने साथ उनकी मोहक बातें, उनकी आकर्षक चितवनें, उनके चलने का ढंग तथा उनके प्रेमपूर्ण आलिंगनों का स्मरण हो आया। इस तरह वे सिसकने लगीं।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती की टीका इस प्रकार है : ''गोपियों ने सोचा, ''कृष्ण रूपी चन्द्रमा अपनी अमृतमयी हँसी के तीरों से हमारे हृदयों को विदीर्ण करता हुआ दूर चला गया। अतः जब वह नगर की स्त्रियों के साथ भी वैसा ही करता है, तो वे क्यों नहीं मर जायेंगी?'' इन विचारों से अभिभूत होकर तरुण गोपियाँ श्री बलदेव की उपस्थिति में भी चिल्लाने लगीं।

सङ्कर्षणस्ताः कृष्णस्य सन्देशैर्हृदयंगमैः ।
सान्त्वयामास भगवान्नानानुनयकोविदः ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

सङ्कर्षणः—परम आकर्षण वाले, बलराम ने; ताः—उनको; कृष्णस्य—कृष्ण के; सन्देशैः—गुप्त सन्देश से; हृदयम्—हृदय को; गमैः—स्पर्श करते; सान्त्वयाम् आस—ढाढ़स बँधाया; भगवान्—भगवान्; नाना—अनेक प्रकार के; अनुनय—बीच-बचाव में; कोविदः—पटु।

सबों को आकृष्ट करने वाले भगवान् बलराम ने नाना प्रकार से समझाने-बुझाने में पटु होने के कारण, गोपियों को भगवान् कृष्ण द्वारा उनके साथ भेजे हुए गुप्त सन्देश सुनाकर उन्हें धीरज बँधाया। ये सन्देश गोपियों के हृदयों को भीतर तक छू गये।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी ने *विष्णु पुराण* का निम्नलिखित श्लोक (५.२४.२०) उद्धृत किया है, जो गोपियों के लिए बलराम द्वारा लाए गए कृष्ण के सन्देशों को बताने वाला है—

सन्देशै साममधुरै प्रेमगर्भैरगर्वितै।

रामेणाश्वासिता गोप्यः कृष्णस्यातिमनोहरै॥

''भगवान् बलराम ने गोपियों को भगवान् कृष्ण का सर्वाधिक मोहक सन्देश देकर सान्त्वना दी

जिनमें मधुर अनुनय-विनय था और जो उनके प्रति शुद्ध प्रेम से प्रेरित थे और जिनमें रंचमात्र भी गर्व नहीं था।'' श्रील जीव गोस्वामी यह भी टीका करते हैं कि संकर्षण नाम से यह अभिप्रेत है कि बलराम ने कृष्ण को अपने मन में प्रकट होने के लिए आकर्षित किया और इस तरह गोपियों को श्रीकृष्ण का दर्शन कराया। बलराम ने इस प्रकार से श्रीकृष्ण की प्रेमिकाओं को सान्त्वना दी।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती कहते हैं कि भगवान् कृष्ण ने विविध सन्देश भेजे थे। कुछ में गोपियों के लिए दिव्य ज्ञान का उपदेश था, कुछ में अनुनय-विनय और अन्य भगवान् की शक्ति को प्रकट करने वाले थे। *हृदयंगमै* शब्द के दिये हुए अर्थ के अतिरिक्त यह शब्द यह भी सूचित करता है कि ये सन्देश गोपनीय थे।

द्वौ मासौ तत्र चावात्सीन्मधुं माधवं एव च ।
रामः क्षपासु भगवान्गोपीनां रतिमावहन् ॥ १७॥

शब्दार्थ

द्वौ—दो; मासौ—माह; तत्र—वहाँ (गोकुल में); च—तथा; अवात्सीत्—निवास किया; मधुम्—मधु (चैत्र); माधवम्—माधव (वैशाख); एव—निस्सन्देह; च—भी; रामः—बलराम; क्षपासु—रातों में; भगवान्—भगवान्; गोपीनाम्—गोपियों को; रतिम्—माधुर्य सुख; आवहन्—लाते हुए।

भगवान् बलराम वहाँ मधु चैत्र तथा माधव वैशाख दो मास तक रहे और रात में अपनी गोपिका-मित्रों को माधुर्य आनन्द प्रदान करते रहे।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर गोस्वामी कहते हैं कि जिन गोपियों ने श्री बलराम के साथ उनके गोकुल आने पर माधुर्य सुख प्राप्त किया उन्होंने उस समय अल्पायु होने के कारण कृष्ण के रास-नृत्य में भाग नहीं लिया था। इसकी पुष्टि में श्रील जीव गोस्वामी ने *भागवत* का श्लोक (१०.१५.८)—*गोप्योऽअन्तरेण भुजयोः*—उद्धृत किया है, जो यह बताता है कि कुछ विशेष गोपियाँ बलराम की संगिनियों के रूप में रहती हैं। यही नहीं, जीव गोस्वामी कहते हैं कि जब कृष्ण ने शंखचूड़ का वध किया उस समय मनाये गये होलिकोत्सव में बलराम ने जिन गोपियों के साथ रमण किया वे कृष्ण द्वारा रमण की गई गोपियों से भिन्न थीं। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती इस व्याख्या से सहमत हैं।

पूर्णचन्द्रकलामृष्टे कौमुदीगन्धवायुना ।
यमुनोपवने रेमे सेविते स्त्रीगणैर्वृतः ॥ १८॥

शब्दार्थ

पूर्ण—पूर्ण; चन्द्र—चन्द्रमा की; कला—किरणों से; मृष्टे—नहलाई, स्नात; कौमुदी—कुमुदिनी की, जो चाँदनी पाकर खिलती है; गन्ध—सुगन्ध (ले जाने वाली); वायुना—हवा से; यमुना—यमुना नदी के; उपवने—उद्यान में; रेमे—रमण किया; सेविते—सेवित; स्त्री—स्त्रियों से; गणैः—अनेक; वृतः—घिरे हुए।

अनेक स्त्रियों के संग भगवान् बलराम ने यमुना नदी के तट पर एक उद्यान में रमण किया। यह उद्यान पूर्ण चन्द्रमा की किरणों से नहलाया हुआ था और रात में खिली कुमुदिनियों की सुगन्ध ले जाने वाली मन्द वायु के द्वारा स्पर्शित था।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती बतलाते हैं कि भगवान् बलराम की माधुर्य लीला यमुना के किनारे एक छोटे-से जंगल में हुई जो श्रीराम-घट्ट के नाम से विख्यात है और श्रीकृष्ण की रास स्थली से काफी दूर है।

वरुणप्रेषिता देवी वारुणी वृक्षकोटरात् ।
पतन्ती तद्वनं सर्वं स्वगन्धेनाध्यवासयत् ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

वरुण—समुद्र के देवता वरुण द्वारा; प्रेषिता—भेजी गई; देवी—दैवी; वारुणी—वारुणी शराब; वृक्ष—पेड़ के; कोटरात्—खोखले छिद्र से; पतन्ती—बह निकली; तत्—उस; वनम्—जंगल को; सर्वम्—सारे; स्व—अपनी; गन्धेन—सुगन्ध से; अध्यवासयत्—अधिक सुगन्धित बना दिया।

वरुण देव द्वारा भेजी गयी दैवी वारुणी मदिरा एक वृक्ष के खोखले छिद्र से बह निकली और अपनी मधुर गन्ध से सारे जंगल को और अधिक सुगन्धित बना दिया।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी बतलाते हैं कि वारुणी शहद के आसवन से प्राप्त एक द्रव है। श्री विश्वनाथ चक्रवर्ती कहते हैं कि वरुण-पुत्री देवी वारुणी उस विशेष दैवी पेय की अधिष्ठात्री है। वे *श्री हरिवंश* से निम्नलिखित उद्धरण भी देते हैं—*समीपं प्रेषिता पित्रा वरुणेन तवानघ।* यहाँ देवी वारुणी बलराम से कहती है, ''हे निष्पाप! मेरे पिता वरुण ने मुझे आपके पास भेजा है।''

तं गन्धं मधुधाराया वायुनोपहृतं बलः ।
आघ्रायोपगतस्तत्र ललनाभिः समं पपौ ॥ २० ॥

शब्दार्थ

तम्—उस; गन्धम्—सुगन्ध को; मधु—शहद की; धारायाः—धारा का; वायुना—वायु द्वारा; उपहृतम्—पास लाई गई; बलः—बलराम; आघ्राय—सूँघ कर; उपगतः—पास जाकर; तत्र—वहाँ; ललनाभिः—तरुण स्त्रियों के; समम्—साथ; पपौ—पिया।

वायु उस मधुर पेय की धारा की सुगन्ध को बलराम के पास ले गई और जब उन्होंने उसे सूँघा तो वे (वृक्ष के पास) गये। वहाँ उन्होंने तथा उनकी संगिनियों ने उसका पान किया।

उपगीयमानो गन्धर्वैर्वनिताशोभिमण्डले ।
रेमे करेणुयूथेशो माहेन्द्र इव वारणः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

उपगीयमानः—गीतों के द्वारा प्रशंसित; गन्धर्वैः—गन्धर्वों द्वारा; वनिता—युवतियों द्वारा; शोभि—सुशोभित; मण्डले—गोले में; रेमे—रमण किया; करेणु—हथनियों के; यूथ—झुंड के; ईशः—स्वामी; माहा-इन्द्रः—इन्द्र के; इव—सदृश; वारणः—हाथी (ऐरावत)।

जब गन्धर्वगण उनका यशोगान कर रहे थे तो भगवान् बलराम तरुण स्त्रियों के तेजोमय वृत्त के मध्य रमण कर रहे थे। वे इन्द्र के शानदार हाथी ऐरावत, जो हथनियों के झुंड में रमण कर रहा हो की तरह लग रहे थे।

नेदुर्दुन्दुभयो व्योम्नि ववृषुः कुसुमैर्मुदा ।
गन्धर्वा मुनयो रामं तद्वीर्यैरीडिरे तदा ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

नेदुः—ध्वनि करने लगीं; दुन्दुभयः—दुन्दुभियाँ; व्योम्नि—आकाश में; ववृषुः—वर्षा की; कुसुमैः—फूलों से; मुदा—हर्षपूर्वक; गन्धर्वाः—गन्धर्वों ने; मुनयः—मुनियों ने; रामम्—बलराम की; तत्-वीर्यैः—उनके वीरतापूर्ण कार्यों समेत; ईडिरे—प्रशंसा की; तदा—तब।

उस समय आकाश में दुन्दुभियाँ बजने लगीं, गन्धर्वों ने प्रसन्नतापूर्वक फूलों की वर्षा की और मुनियों ने भगवान् बलराम के वीरतापूर्ण कार्यों की प्रशंसा की।

उपगीयमानचरितो वनिताभिर्हलायुध ।
वनेषु व्यचरत्क्षीवो मदविह्वललोचनः ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

उपगीयमान—गायी जाकर; चरितः—उनकी लीलाएँ; वनिताभिः—स्त्रियों सहित; हलायुधः—बलराम; वनेषु—वनों के बीच; व्यचरत्—घूमने लगे; क्षीवः—चूर; मद—नशे में; विह्वल—पराजित; लोचनः—आँखें।

जब उनके कार्यों का गान हो रहा था, तो हलायुध मदोन्मत्त जैसे होकर अपनी संगिनियों के संग विविध जंगलों में घूम रहे थे। उनकी आँखें नशे में चूर थीं।

स्रग्व्येककुण्डलो मत्तो वैजयन्त्या च मालया ।
बिभ्रत्स्मितमुखाम्भोजं स्वेदप्रालेयभूषितम् ।
स आजुहाव यमुनां जलक्रीडार्थमीश्वरः ॥ २४ ॥
निजं वाक्यमनादृत्य मत्त इत्यापगां बलः ।
अनागतां हलाग्रेण कुपितो विचकर्ष ह ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

स्रक्-वी—माला धारण किये; एक—एक; कुण्डलः—कुण्डल; मत्तः—हर्ष से उन्मत्त; वैजयन्त्या—वैजयन्ती नामक; च—तथा; मालया—माला से; बिभ्रत्—प्रदर्शित करते हुए; स्मित—हँसता हुआ; मुख—उसका मुख; अम्भोजम्—कमल सदृश; स्वेद—पसीने का; प्रालेय—बर्फ के साथ; भूषितम्—अलंकृत; सः—उसने; आजुहाव—बुलाया; यमुनाम्—यमुना नदी को; जल—जल में; कृईडा—खेलने के; अर्थम्—हेतु; ईश्वरः—भगवान्; निजम्—अपने; वाक्यम्—शब्द; अनादृत्य—अनादर करके; मत्तः—उन्मत्त; इति—इस प्रकार (सोचते हुए); आप-गाम्—नदी को; बलः—बलराम ने; अनागताम्—न आती हुई; हल—अपने हल के; अग्रेण—अगले भाग या नोक से; कुपितः—क्रुद्ध; विचकर्ष ह—खींचा।

हर्ष से उन्मत्त बलराम फूल-मालाओं से खेल रहे थे। इनमें सुप्रसिद्ध वैजयन्ती माला सम्मिलित थी। वे कान में एक कुण्डल पहने थे और उनके मुसकान-भरे कमल-मुख पर पसीने की बूँदें इस तरह सुशोभित थीं मानो बर्फ के कण हों। तब उन्होंने यमुना को बुलाया जिससे वे उसके जल में क्रीडा कर सकें किन्तु उसने उनके आदेश की उपेक्षा इसलिए कर दी क्योंकि वे मदोन्मत्त थे। इससे बलराम क्रुद्ध हो उठे और वे अपने हल की नोक से नदी को खींचने लगे।

पापे त्वं मामवज्ञाय यन्नायासि मयाहुता ।
नेष्ये त्वां लाङ्गलाग्रेण शतधा कामचारिणीम् ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

पापे—रे पापिनी; त्वम्—तुम; माम्—मेरा; अवज्ञाय—अनादर करके; यत्—क्योंकि; न आयासि—नहीं आती हो; मया—मेरे द्वारा; आहुता—बुलाई गई; नेष्ये—मैं लाऊँगा; त्वाम्—तुमको; लाङ्गल—अपने हल की; अग्रेण—नोक से; शतधा—सौ भागों में; काम—स्वेच्छा से; चारिणीम्—चलने वाली।

[बलराम ने कहा] : मेरा अनादर करने वाली पापिनी! तुम मेरे बुलाने पर न आकर केवल मनमाने चलने वाली हो। अतः मैं अपने हल की नोक से सौ धाराओं के रूप में तुम्हें यहाँ ले आऊँगा।

एवं निर्भर्त्सिता भीता यमुना यदुनन्दनम् ।
उवाच चकिता वाचं पतिता पादयोर्नृप ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; निर्भर्त्सिता—फटकारी गई; भीता—डरी हुई; यमुना—यमुना नदी की अधिष्ठात्री देवी; यदु-नन्दनम्—यदु के प्रिय वंशज बलराम से; उवाच—बोली; चकिता—काँपती हुई; वाचम्—शब्द; पतिता—गिरी हुई; पादयोः—पाँवों पर; नृप—हे राजा (परीक्षित)।

[शुकदेव गोस्वामी ने कहा] : हे राजन्, बलराम द्वारा इस प्रकार फटकारी जाकर डरी हुई यमुनादेवी आईं और यदुनन्दन बलराम के चरणों पर गिर पड़ीं। काँपते हुए उसने उनसे निम्नलिखित शब्द कहे।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी के अनुसार बलराम के समक्ष प्रकट होने वाली देवी श्रीमती कालिन्दी की अंशरूपा थीं, जो कि द्वारका में भगवान् कृष्ण की पत्नी हैं। श्रील जीव गोस्वामी उन्हें कालिन्दी की ''छाया'' बतलाते हैं और श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती पुष्टि करते हैं कि वे कालिन्दी की अंश हैं कालिन्दी नहीं। श्रील जीव गोस्वामी *श्री हरिवंश* से भी इस कथन के द्वारा प्रमाण देते हैं—*प्रत्युवाचार्णववधूम्*—अर्थात् देवी यमुना समुद्र की पत्नी हैं। इसीलिए *हरिवंश* में उन्हें *सागरांगना* भी कहा गया है।

राम राम महाबाहो न जाने तव विक्रमम् ।
यस्यैकांशेन विधृता जगती जगतः पते ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

राम राम—हे राम, राम; महा-बाहो—हे विशाल भुजाओं वाले; न जाने—मैं नहीं जानती; तव—तुम्हारा; विक्रमम्—पराक्रम; यस्य—जिसका; एक—एक; अंशेन—अंश से; विधृता—धारण की गई; जगती—पृथ्वी; जगतः—ब्रह्माण्ड के; पते—हे स्वामी।

[यमुनादेवी ने कहा] : हे विशाल भुजाओं वाले राम, हे राम, मैं आपके पराक्रम के बारे में कुछ भी नहीं जानती। हे ब्रह्माण्ड के स्वामी, आप अपने एक अंशमात्र से पृथ्वी को धारण किए हुए हैं।

तात्पर्य : *एकांशेन* भगवान् के शेष रूप अंश का द्योतक है। इसकी पुष्टि आचार्यों द्वारा हुई है।

परं भावं भगवतो भगवन्मामजानतीम् ।
मोक्तुमर्हसि विश्वात्मन्प्रपन्नां भक्तवत्सल ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

परम्—परम; भावम्—पद को; भगवतः—भगवान् का; भगवन्—हे भगवान्; माम्—मुझको; अजानतीम्—न जानती हुई; मोक्तुम् अर्हसि—कृपया छोड़ दें; विश्व—ब्रह्माण्ड के; आत्मन्—हे आत्मा; प्रपन्नाम्—शरणागत; भक्त—अपने भक्तों पर; वत्सल—हे दयालु।

हे प्रभु, आप मुझे छोड़ दें। हे ब्रह्माण्ड के आत्मा, मैं भगवान् के रूप में आपके पद को नहीं जानती थी किन्तु अब मैं आपकी शरण में हूँ और आप अपने भक्तों पर सदैव दयालु रहते हैं।

ततो व्यमुञ्चद्यमुनां याचितो भगवान्बलः ।
विजगाह जलं स्त्रीभिः करेणुभिरिवेभराट् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; व्यमुञ्चत्—छोड़ दिया; यमुनाम्—यमुना को; याचितः—याचना करती हुई; भगवान्—भगवान्; बलः—बलराम; विजगाह—घुस गये; जलम्—जल में; स्त्रीभिः—स्त्रियों के साथ; करेणुभिः—अपनी हथनियों के साथ; इव—सदृश; इभ—हाथियों के; राट्—राजा।

[शुकदेव गोस्वामी ने कहा] : तब बलराम ने यमुना को छोड़ दिया और जिस तरह हाथियों का राजा अपनी हथनियों के झुण्ड के साथ जल में प्रवेश करता है उसी तरह वे अपनी संगिनियों के साथ नदी के जल में प्रविष्ट हुए।

कामं विहृत्य सलिलादुत्तीर्णायासीताम्बरे ।
भूषणानि महार्हाणि ददौ कान्तिः शुभां स्रजम् ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

कामम्—इच्छानुसार; विहृत्य—क्रीड़ा कर चुकने के बाद; सलिलात्—जल से; उत्तीर्णाय—बाहर निकले हुए को; असित—नीला; अम्बरे—कपड़ों की जोड़ी (ऊपर तथा नीचे के); भूषणानि—गहने; महा—अत्यधिक; अर्हाणि—मूल्यवान; ददौ—दिया; कान्तिः—देवी कान्ति; शुभाम्—अतीव सुन्दर; स्रजम्—गले का हार।

बलराम ने जी भरकर जल-क्रीड़ा की और जब वे बाहर निकले तो देवी कान्ति ने उन्हें नीले वस्त्र, मूल्यवान आभूषण तथा चमकीला गले का हार भेंट किया।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी ने *विष्णु पुराण* से उद्धरण देकर यह दर्शाया है कि यहाँ पर उल्लिखित देवी कान्ति वास्तव में देवी लक्ष्मी हैं—

वरुणप्रहिता चास्मै मालामम्लानपङ्कजाम्।

समुद्राभे तथा वस्त्रे नीले लक्ष्मीरयच्छता॥

''वरुण द्वारा भेजी गई देवी लक्ष्मी ने उन्हें न मुरझाने वाले कमल-पुष्पों की माला तथा समुद्र की भाँति नीले रंग वाले वस्त्रों की जोड़ी भेंट की।''

भागवत के महान् टीकाकार श्रील श्रीधर स्वामी ने देवी लक्ष्मी द्वारा बलराम से कहे गये कथन को *श्री हरिवंश* से भी उद्धृत किया है—

जातरूपमयं चैकं कुण्डलं वज्रभूषणम्।

आदिपद्मं च पद्माख्यं दिव्यं श्रवणभूषणम्।

देवेमां प्रतिगृह्णीष्व पौराणीं भूषणक्रियाम्॥

''हे स्वामी! आप दैवी आभूषणों के रूप में अपने कानों के लिए यह हीरे से जड़ा हुआ सोने का एक कुण्डल और पद्म कहलाने वाला यह आदि कमल स्वीकार करें। कृपया इन्हें स्वीकार करें क्योंकि

अलंकरण का यह कार्य परम्परागत है।''

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ने इतना और इंगित किया है कि लक्ष्मीजी भगवान् के स्वांश द्वितीय व्यूह से सम्बद्ध संकर्षण की प्रिया हैं।

वसित्वा वाससी नीले मालां आमुच्य काञ्चनीम् ।
रेये स्वलङ्कृतो लिप्तो माहेन्द्र इव वारणः ॥ ३२॥

शब्दार्थ

वसित्वा—पहन कर; वाससी—वस्त्रों की जोड़ी; नीले—नीले रंग की; मालाम्—गले का हार; आमुच्य—पहन कर; काञ्चनीम्—सुनहली; रेजे—शोभायमान हो रहे थे; सु—सुन्दर; अलङ्कृतः—आभूषित; लिप्तः—लेप किया; माहा-इन्द्रः—महेन्द्र का; इव—सदृश; वारणः—हाथी।

भगवान् बलराम ने नीले वस्त्र पहने और गले में सुनहरा हार डाल लिया। सुगन्धियों से लेपित और सुन्दर ढंग से अलंकृत होकर वे इन्द्र के हाथी जैसे सुशोभित हो रहे थे।

तात्पर्य : चन्दन-लेप तथा अन्य शुद्ध सुगंधित वस्तुओं का लेप करके बलराम इन्द्र के महान् हाथी ऐरावत जैसे लग रहे थे।

अद्यापि दृश्यते राजन्यमुनाकृष्टवर्त्मना ।
बलस्यानन्तवीर्यस्य वीर्यं सूचयतीव हि ॥ ३३॥

शब्दार्थ

अद्य—आज; अपि—भी; दृश्यते—देखी जाती है; राजन्—हे राजा (परीक्षित); यमुना—यमुना नदी; आकृष्ट—खींची हुई; वर्त्मना—धाराओं से; बलस्य—बलराम के; अनन्त—असीम; वीर्यस्य—बल के; वीर्यम्—पराक्रम; सूचयती—सूचित करती हुई; इव—मानो; हि—निस्सन्देह।

हे राजन्, आज भी यह देखा जा सकता है कि किस तरह यमुना अनेक धाराओं में होकर बहती है, जो असीम बलशाली बलराम द्वारा खींचे जाने पर बन गई थीं। इस प्रकार यमुना उनके पराक्रम को प्रदर्शित करती है।

एवं सर्वा निशा याता एकेव रमतो व्रजे ।
रामस्याक्षिप्तचित्तस्य माधुर्यैर्व्रजयोषिताम् ॥ ३४॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; सर्वा—सभी; निशाः—रातें; याताः—बीत गईं; एका—एक; इव—मानो; रमतः—रमण करते हुए; व्रजे—व्रज में; रामस्य—बलराम के; आक्षिप्त—मोहित; चित्तस्य—चित्त का; माधुर्यैः—अद्वितीय सौन्दर्य से; व्रज-योषिताम्—व्रज की स्त्रियों के।

इस तरह बलराम के लिए सारी रातें व्रज में रमण करते करते एक रात की तरह बीत गईं।

उनका मन व्रज की तरुण स्त्रियों की अद्वितीय माधुरी से मोहित था।

तात्पर्य : भगवान् बलराम व्रज की तरुण एवं सुन्दर स्त्रियों की मोहक लीलाओं से मुग्ध हो गए। इस तरह हर रात उनके लिए नया अनुभव था और सारी रातें इस तरह बीत गईं मानो एक ही रात हो।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत ''बलराम का वृन्दावन जाना'' नामक पैंसठवें अध्याय के भक्तिवेदान्त स्वामी श्रील प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।